हरनाम दास

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

(न्यायाधिपति पी.बी. गजेन्द्रगडकर, न्यायाधिपति ए.के. सरकार, न्यायाधिपति के.एन. वांचू, न्यायाधिपति के.सी. दास गुप्ता एवं न्यायाधिपति एन. राजगोपाला अय्यंगर)

उच्च न्यायालय की शक्तियां-राजद्रोही प्रकाशनों को जब्त करने की शक्तियां-सरकार द्वारा पारित आदेश-उच्च न्यायालय में पारित आदेश को अपास्त करने हेतु आवेदन-आदेश में नही बताये गये राय के अलग आधार-क्या आदेश अपास्त करने योग्य है-दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1898(1898 का अधिनियम 5), धाराऐ 99ए, 99बी, 99सी, 99डी।

प्रत्यर्थी ने दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 99ए के अन्तर्गत अपीलार्थी द्वारा लिखित दो पुस्तको को जब्त करने का आदेश पारित किया जो उनकी राय में ऐसी सामग्री लिये हुए था जिसका प्रकाशन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 153ए एवं 295ए के अन्तर्गत दण्डनीय था। आदेश में प्रत्यर्थी ने संहिता की धारा 99ए के अन्तर्गत वे आधार नही बताये गये थे, जिनके आधार पर प्रत्यर्थी ने अपनी राय बनाईथी। अपीलार्थी ने संहिता की धारा 99बी के अन्तर्गत माननीय उच्च न्यायालय को आदेश अपास्त करने

के लिए आवेदन किया। संहिता की धारा 99डी यह उपबंधित करती है कि उच्च न्यायालय सन्तुष्ट नही होने पर जब्त की गईपुस्तको में राजद्रोही अथवा संहिता की धारा 99ए की उपधारा (1) में संदर्भित प्रक्रिया की अन्य सामग्री लिये है, जब्ती आदेश को अपास्त करेगा। उच्च न्यायालय का विचार था कि वे आदेश को इस कारण से संहिता की धारा 99डी के अन्तर्गत अपास्त नही कर सकता था, क्योंकि आदेश में वे आधार नही बताये थे, जिन पर सरकार ने अपनी राय बनाईथी तथा न्यायालय का कर्तव्य केवल यह देखना था, क्या वे पुस्तके आरोपित अपराध के दायरे में आती थी। पुस्तको का अपने लिए निरीक्षण करने पर उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि उनकी सामग्री अप्रिय तथा अत्यन्त आपत्तिजनक थी और आवेदन निरस्त किया।

अभिनिर्धारित (न्यायाधिपतिगण गजेन्द्रगडकर, सरकार, वांचू एवं अय्यंगर) के विरोध में न्यायाधिपति दास गुप्ता प्रत्यर्थी द्वारा संहिता की धारा 99ए द्वारा अपेक्षित आधारो को अपनी राय में बताने में असफल रहने पर उच्च न्यायालय को संहिता की धारा 99डी के अन्तर्गत आदेश को अपास्त करना चाहिए था। उक्त धारा के अन्तर्गत यह उच्च न्यायालय का कर्तव्य था कि वह जब्ती आदेश को अपास्त करता। यदि वह सन्तुष्ट नही था कि जिन आधारो पर सरकार ने अपनी राय बनायी थी वे उस राय को न्यायाचित ठहराते। जहां राय के कोईआधार नही दिये गये है, वहां उच्च

न्यायालय को सन्तुष्ट हो सकने पर आदेश इस कारण से अपास्त करना चाहिए था कि सरकार द्वारा दिये गये आधार उसे न्यायोचित ठहराते थे।

अरूण रंजन घोष बनाम वेस्ट बंगाल राज्य (1955) 59 सी.डबल्यू.एन. 495-स्वीकृत

प्रेमी खेम राज बनाम मुख्य सचिव, ए.आई.आर. (1951) राज. 113, एन. वीरब्रह्मम बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. (1959) आंध्र प्रदेश 572 एवं बाबा खलील अहमद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. (1960) इलाहाबाद 715-अस्वीकृत

न्यायाधिपति दास गुप्ता के अनुसार-उच्च न्यायालय के पास सरकार द्वारा बनायी गईराय के आधार आदेश में बताने से असफल रहने पर आदेश को अपास्त करने की कोईशक्ति नही थी। उच्च न्यायालय का कर्तव्य यह देखने का नही था कि सरकार द्वारा बनायी गईराय के बताये गये आधार सही थे या नही। बल्कि यह देखना था कि बनायी गईराय सही थी या नही; यह केवल पुस्तको के परीक्षण द्वारा ही किया जा सकता है। संहिता की धारा 99बी उन आधारों को सीमित करती है, जिन पर एक औरएक के लिए अनुतोष मांगा जा सकता है, केवल यह कि किताबों में कोईआपत्तिजनक बात न हो। न्यायालयो के लिए आधार में कुछ जोडना स्वीकार्य नही था।

बैजनाथ बनाम एम्परर, ए.आई.आर. (1925) इलाहाबाद 195 प्रेमी खेम राज बनाम मुख्य सचिव, ए.आई.आर. (1951) राज. 113, एन. वीरब्रह्मम बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. 1959 आंध्र प्रदेश 572 एवं बाबा खलील अहमद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए.आई.आर. (1960) इलाहाबाद 715-स्वीकृत.

अरूण रंजन घोष बनाम वेस्ट बंगाल राज्य (1955) 59 सी.डबल्यू.एन. 495-अस्वीकृत.

आपराधिक अपीलीए क्षेत्राधिकार 1961 की आपराधिक अपील संख्या 74 आपराधिक विविध सं. 2006/1953 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के 7 मई 1957 के निर्णय औरआदेश के विरूद्घ विशेष अनुमति द्वारा अपीलवेद व्यास, एस.के. कपूर एवं गणपत राय, अपीलार्थी की ओर से।

जी.सी. माथुर एवं सी.पी. लाल, प्रत्यर्थी की ओर से।

1961. 27 अप्रेल. न्यायाधिपतिगण गजेन्द्रगडकर, सरकार, वांचू एवं अय्यंगर का निर्णय सरकार द्वारा दिया गया। न्यायाधपति दास गुप्ता ने एक अलग निर्णय दिया।

न्यायाधिपति सरकार ने इस अपील में जिस एक मात्र प्रश्न पर तर्क दिया गया वह दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 99 डी के तहत मूलतः क्षेत्राधिकार के निर्माण से संबंधित है।

अपीलार्थी हिंदी में सिख मत खानदान भाग 1 और भूमिका नजम सिख मत खानदान नामक दो पुस्तको के लेखक था, जिन्हे उन्होने अप्रेल 1953 में प्रकाशित किया था। 30 जुलाई 1953 को, इस अपील में प्रत्यर्थी उत्तर प्रदेश राज्य ने संहिता की धारा 99 ए के तहत उन पुस्तको को जब्त सरकार करने का आदेश दिया, जिन्हे जब्त कर लिया गया था। वह आदेश, जहां तक तात्विक है, निम्नलिखित शब्दों में था; ''आपराधिक प्रक्रिया, संहिता की धारा 99 ए द्वारा प्रदत्त अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए सरकार को पुस्तको को इस आधार पर कि उक्त पुस्तकों में ऐसी सामग्री है, जब्त करने की घोषणा करते हुए खुशी हो रही है।" जिनका प्रकाशन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 153 ए और 295 ए के तहत दण्डनीय है। इस आदेश की वैधता को वर्तमान अपील में चुनौती दी गईहै।

धारा 99 ए जिसके तहत आदेश दिया गया था, जहां तक इन शर्तो में प्रासंगिक है;

''जहां राज्य सरकार को किसी समाचार पत्र, पुस्तक या किसी दस्तावेज में कोई देशद्रोही मामला या ऐसा कोई मामला दिखाईदेता है जो भारत के नागरिकों के विभिन्न वर्गो के बीच शत्रुता या घृणा की भावनाओ को बढावा देता है या बढावा देने का इरादा रखता है या जो जानबूझकर औरदुर्भावनापूर्ण रूप से इरादा रखता है, ऐसे किसी भी वर्ग के धर्म या धार्मिक विश्वास का अपमान करके उसकी धार्मिक भावनाओ को ठेस

पहुंचाना, यानी किसी भी विषय का प्रकाशन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 124ए या धारा 153ए या धारा 295ए के तहत दण्डनीय है। राज्य सरकार अपनी राय को आधार बताते हुए, अधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसी पुस्तक की प्रत्येक प्रति को सरकार द्वारा जब्त करने की घोषणा कर सकती है।

इस धारा की शर्तो से दो बाते स्पष्ट रूप से दिखाईदेती है। पहली बात तो यह है कि इसके तहत कोईआदेश तभी दिया जा सकता है जब सरकार कोईनिश्चित राय बनाये, वह राय यह है कि जिस दस्तावेज के संबंध में आदेश देने का प्रस्ताव है, उसमें "कोईभी मामला शामिल है जिसका प्रकाशन दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 124ए या धारा 153ए या धारा 295ए के तहत दण्डनीय है।" धारा 124ए देशद्रोही मामलों से संबंधित है। धारा 153ए भारतीय नागरिको के विभिन्न वर्गो के बीच शत्रुता को बढावा देने वाले मामलों से संबंधित है। धारा 295ए ऐसे नागरिकों के किसी भी वर्ग के धर्म या धार्मिक विश्वासों का अपमान करने वाले मामलों से संबंधित है। इस भाग से जो दूसरी बात सामने आती है वह यह है कि सरकार को अपनी राय का आधार बताना होगा। इस मामले में दिये गये आदेश में निसन्देह कहा गया है कि सरकार की राय में किताबों में ऐसे मामले थे जिनका प्रकाशन संहिता की धारा 153ए और 295ए के तहत दण्डनीय था। हालांकि, इसमें उस राय के आधारों को जैसा बताया जाना

चाहिए, नही बताया गया। इसलिए यह ज्ञात नही है कि सरकार के अनुसार कौन से समुदाय एक-दूसरे से अलग-थलग हो गये थे या जिनकी धार्मिक मान्यताऐं आहत हुईथी, सरकार ने ऐसा क्यों नही सोचा कि धर्म के प्रति ऐसा अलगाव या अपराध हुआ था।

अब धारा 99 बी. जब्त की गईपुस्तकों या दस्तावेजो में रूचि रखने वाले व्यक्ति को धारा के तहत दिये गये आदेश को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय में आवेदन करने का अधिकार देता है। धारा 99 ए औरधारा 99 डी ऐसे आवेदन पर उच्च न्यायालय के कर्तव्य को निर्दिष्ट करती है। इस मामलें में इन दो धाराओ पर विशेष रूप से धारा 99 सी के साथ नीचे बतायेनुसार इस प्रकार विचार करना होगा।

धारा 99 बी. कोईभी व्यक्ति जिसकी किसी अखबार, पुस्तक या अन्य दस्तावेज में कोईरूचि हो, जिसके संबंध में धारा 99 ए के तहत जब्ती का आदेश दिया गया हो, ऐसे आदेश की तारीख से दो महीने के भीतर इस आधार पर आदेश को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय में आवेदन कर सकता है कि समाचार पत्र या पुतक या अन्य दस्तावेज के मुद्दे, जिसके संबंध में आदेश दिया गया था, में ऐसी प्रकृति का कोईदेशद्रोही या अन्य मामला शामिल नही था जैसा कि धारा 99 ए की उपधारा (1) में संदर्भित है।

धारा 99 सी. ऐसे प्रत्येक आवेदन की सुनवाईऔरनिर्धारण उच्च

न्यायालय की तीन न्यायाधीशों वाली एक विशेष पीठ द्वारा किया जायेगा।

धारा 99 डी. (1) आवेदन प्राप्त होने पर, विशेष पीठ, यदि वह इस बात से सन्तुष्ट नही है कि जिस समाचार पत्र या पुस्तक या अन्य दस्तावेज के संबंध में आवेदन किया गया है की प्रकृति जैसा कि धारा 99 ए की उपधारा (1) में संदर्भित है। उसमें देशद्रोही या अन्य मामला शामिल है, जब्ती के आदेश को रद्द करे।

हमारा मानना है कि इन धाराओ से यह बिल्कुल स्पष्ट है कि किस आधार पर धारा के तहत आवेदन किया जा सकता है। धारा 99 बी. वह आधार है, जो यदि स्थापित हो जाता है, तो उच्च न्यायालय को धारा 99 डी के तहत आदेश को रद्द करने की आवश्यकता होगी।

अपीलार्थी ने धारा 99 बी. के तहत इलाहाबाद में उसकी पुस्तको को जब्त करने के आदेश को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय का रूख किया। ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय में यह तर्क दिया गया कि जब्ती के आदेश को इस आधार पर रद्द कर दिया जाना चाहिए कि सरकार की राय के आधार नही बताये गये है। इस विवाद के संबंध में उच्च न्यायालय ने कहा, ''आधार बताने की आवश्यकता अनिवार्य है'' केवल धारा के शब्दो का उद्घरण देने से काम नही चलेगा। लेकिन जैसा कि बैजनाथ बनाम एम्परर, ए.आई.आर. (1925) इलाहाबाद 195 मामलें में इस न्यायालय की एक विशेष पीठ ने माना है, जिससे हम सम्मानपूर्वक सहमत

है, उच्च न्यायालय आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 99 डी के प्रावधानों के मद्देनजर इस सवाल के अलावा किसी अन्य बिन्दु पर विचार नही कर सकता है कि क्या वास्तव में दस्तावेज आरोपित अपराध की शरारत के अन्तर्गत आता है"। इस मामले को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय ने राय के आधार बताने में चूक के कारण आदेश को रद्द करने से इन्कार कर दिया। इसके बाद उच्च न्यायालय ने पुस्तकों की स्वयं जांच की औरपाया कि उनकी सामग्री "अप्रिय औरअत्यधिक आपत्तिजनक" थी औरआवेदन को यह कहते हुए निरस्त कर दिया कि अपीलार्थी "यह दिखाने में पूरी तरह से विफल रहा है कि पुस्तकों में ऐसी बाते नही थी जो शत्रुता की भावनाओ को बढावा देती हो औरविभिन्न वर्गो के बीच नफरत या जिसने सिखों के धर्म या धार्मिक मान्यताओ का अपमान नही किया या अपमान करने का प्रयास नही किया"। वर्तमान अपील उच्च न्यायालय के इसी आदेश से उत्पन्न हुई है।

उच्च न्यायालय का विचार था कि धारा 99 डी के तहत उसका कर्तव्य केवल यह देखना था कि "क्या वास्तव में दस्तावेज आरोपित अपराध की श्रेणी में आता है"। इसने सोचा कि कोईदस्तावेज आरोपित अपराध की श्रेणी में आएगा यदि, उसकी अपनी राय में, इसमें ऐसे मामलें शामिल है जिनका प्रकाशन संहिता की धारा 124 ए या धारा 153 ए या 294 ए के तहत दण्डनीय होगा। जैसा कि जब्ती के आदेश में उल्लेखित है,

मामलें पर सरकार की राय के बावजूद, अन्यथा हमें ऐसा लगता है कि उच्च न्यायालय इस कारण से आदेश को बरकरार नही रख सका, क्योंकि उसके विचार में किताबों ने सिखों औरसिख धर्म को ठेस पहुंचाईहै, इस तथ्य के बावजूद कि कुछ अन्य मामलों में भी यही दृष्टिकोण अपनाया गया है, अर्थात (1) प्रेमी खेम राज बनाम मुख्य सचिव (2) एन. वीरब्रह्मम बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और(3) बाबा खलील अहमद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य.

(1) ए.आई.आर. (1951) राज. 113.

(2) ए.आई.आर. (1959) आंध्र प्रदेश 572.

(3) ए.आई.आर. (1960) इलाहाबाद 715,

जाहिरा तौर पर, इन मामलों में यह सोचा गया था कि शब्द "यदि यह सन्तुष्ट नही है कि पुस्तक में देशद्रोही या ऐसी प्रकृति का अन्य मामला शामिल है, जैसा कि धारा 99ए की उपधारा (1) में संदर्भित किया गया है। धारा 99डी का मतलब था, किसी भी कारण से इतना सन्तुष्ट न होना, चाहे जिन कारणों से सरकार ने इसके बारे में अपनी राय बनाईहो। हम धारा 99डी के इस निर्माण को स्वीकार करने में असमर्थ है।

सवाल यह है कि धारा 99ए की उपधारा (1) में उल्लेखित "ऐसी प्रकृति का मामला" शब्दो का क्या मतलब है ? धारा 99डी मतलब ? क्या

उनका आशय उस प्रकृति के किसी मामलें से है जैसा उच्च न्यायालय ने सोचा था ? या क्या उनका तात्पर्य केवल उनसे है जो उसके द्वारा बताये गये कारणों से जिन पर जब्ती का आदेश आधारित था, सरकार ने सोचा था कि उसके द्वारा उल्लेखित दण्ड संहिता की धारा 124ए, 153ए और 295ए एक या एक से अधिक धाराओ के तहत दण्डनीय थे ? हमें ऐसा लगता है कि उत्तरार्द्घ सही दृष्टिकोण है औरयदि धाराऐ है तो अनिवार्य रूप से इसका पालन करता है यदि धारा 99ए, 99बी और 99डी को एक साथ पढा जाता है, जैसा कि उन्हे पढा जाना चाहिए।

अब धारा 99डी का संबंध किसी आदेश को रद्द करने से है। वह आदेश धारा 99ए के तहत बनाया गया है। उस धारा के तहत कोईआदेश तभी दिया जा सकता है जब सरकार के सामने कुछ बाते सामने आ गईहो औरसरकार ने एक निश्चित राय बना ली हो। इस भाग में सरकार को अपनी राय के आधार बताने की भी आवश्यकता है। यह वह आदेश है अर्थात बताये गये आधारो पर आधारित आदेश जो रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय जाने का अधिकार प्रभावित पक्ष को धारा 99बी द्वारा दिया गया है, यह उस सब का पालन करेगा। धारा 99बी पक्षकार द्वारा यह दर्शाना आवश्यक बताती है कि आदेश अनुचित था। बेशक वह आदेश उचित था या नही, यह केवल उन आधारों की खूबियों पर निर्भर करेगा जिन पर वह आधारित था; क्या समान प्रभाव वाला कोईअन्य आदेश अन्य

आधारों पर किया जा सकता था, यह अप्रासंगिक है, क्योंकि इससे वास्तव में दिये गये आदेश की वैधता नही दिखाई देगी; वह आदेश खराब होगा यदि जिन आधारो पर उसे बनाया गया है वे उसका समर्थन नही करते। दो आदेश, हालांकि दोनो यह कहते है कि किसी प्रकाशन में ऐसा मामला शामिल है जो दण्ड संहिता की एक ही धारा को ठेस पहुंचाता है, एक ही या एक समान आदेश नही हो सकते है। यदि उन्हे संबंधित दण्ड संहिता की धारा को ठेस पहुंचाने वाला मानने के कारण अलग-अलग है। अब धारा 99बी में कहा गया है कि आदेश से प्रभावित व्यक्ति इस आधार पर इसे रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय का रूख कर सकता है कि पुस्तक में "इस तरह की प्रकृति का कोईभी देशद्रोही या अन्य मामला शामिल नही है जैसा कि धारा 99ए की उपधारा (1) में संदर्भित है। यहां उल्लेखित मामला, बताये गये कारणों के अनुसार, केवल ऐसे मामले को संदर्भित करता है जिस पर उसके द्वारा बताये गये आधारो पर सरकार की राय आधारित है।

अब हम धारा 99डी की तरफ आगे बढते है। यह जब्ती के उसी आदेश से संबंधित है। धारा 99डी धारा 99बी. के तहत एक आवेदन पर बनायी गयी है। इसलिए उस आदेश को उन आधारों को स्वीकार या अस्वीकार करना चाहिए जिन पर धारा 99बी के तहत आवेदन किया गया है। ये आधार, जैसा कि हमने देखा है, उन आधारों के औचित्य को चुनौती

देने तक सीमित है जिन पर सरकार की राय आधारित थी। आदेश के परिणामस्वरूप जो शब्द हमने पहले धारा 99बी से उद्घत किये है। धारा 99डी में तात्विक रूप से समान प्रारूप में है। दोनो धाराओ का दायरा समान है, इसलिए उनमें होने वाले सामान्य शब्दो का अर्थ दोनो में समान होना चाहिए, इसलिए उन्हे धारा 99डी में होना चाहिए। इस प्रकार धारा 99डी में मतलब ऐसे मामले भी है जिन पर इसके द्वारा बताये गये आधार पर सरकार की राय आधारित थी, जैसा कि उच्च न्यायालय ने सोचा था, उनका मतलब यह नही हो सकता कि आदेश देने के लिए सरकार के कारणों की परवाह किये बिना, जो कि उच्च न्यायालय की राय में इसे उचित ठहराया जाता।

मामले का यह दृष्टिकोण यह भी बताता है कि धारा 99ए के तहत सरकार को अपनी राय का आधार बताने की आवश्यकता है। इसका कारण यह था कि यदि उच्च न्यायालय उन आधारों के औचित्य से सन्तुष्ट नही था तो वह जब्ती के आदेश को रद्द कर सके। यदि ऐसा नही होता, तो सरकार की राय का आधार कोईउद्देश्य पूरा नही करेगा। यह विशेष रूप से जैसा कि धारा 99जी में यह प्रावधान है कि जब्ती के आदेश पर धारा 99बी. के प्रावधानों के अलावा कोईसवाल नही उठाया जा सकता है। यदि आदेश को बरकरार रखा जा सकता है, जैसा कि उच्च न्यायालय ने सोचा है, उन आधारों के अलावा जिन पर सरकार ने अपनी राय आधारित की है,

तो यह उपबंधित करने की कोईआवश्यकता नही होगी कि सरकार की राय के आधार बताये जाने चाहिए; ऐसे आधार तब आदेश की वैधता का निर्णय करने में पूरी तरह अप्रासंगिक हो जाते।

उच्च न्यायालय द्वारा की गईव्याख्या को स्वीकार करने से ऐसा परिणाम निकलेगा जो हमारे विचार में पूरी तरह से असंगत होगा। जब्ती का आदेश जिसके साथ धारा 99डी का संबंध है, निर्विवाद रूप से धारा 99ए. के तहत एक आदेश है। अब उस धारा के तहत एक आदेश अनिवार्य रूप से सरकार का आदेश है, किसी औरका नही। ऐसा मामला लीजिए जहां आदेश देने वाली सरकार अपनी राय के आधार बताती है जिस पर आदेश आधारित है। मान लीजिए कि सरकार कहती है कि संबंधित पुस्तक में दृष्टिकोण ए की अभिव्यक्ति समुदाय एक्स की धार्मिक मान्यताओ को ठेस पहुंचाती है। अब मान ले कि इसे अलग करने के लिए किये गये एक आवेदन में, उच्च न्यायालय इस बात से सन्तुष्ट नही था कि ए समुदाय का दृष्टिकोण एक्स को अपमानित कर सकता है, लेकिन उसने सोचा कि उसी पुस्तक में विचार की एक औरअभिव्यक्ति जिसे हम बी कहेंगे, समुदाय वाईकहता है कि एक अलग समुदाय की धार्मिक मान्यताओ को ठेस पहुंचाती है। यदि ऐसे मामले में उच्च न्यायालय ने आदेश को बरकरार रखा, जो यदि नीचे के न्यायालय का दृष्टिकोण सही है, यह कर सकता है। वास्तव में उच्च न्यायालय द्वारा जब्ती का आदेश दिया जायेगा, न कि

सरकार द्वारा, क्योंकि सरकार ने अपनी राय के आधार बताते समय ऐसा नही कहा था, क्योंकि उसने ऐसा नही कहा था। यह सोचा था कि विचार बी समुदाय वाईकी मान्यताऐं अपमानित कर सकता था। हमें लगता है कि यह असंभव है कि संबंधित वर्गो ने इस तरह के परिणाम पर विचार किया। संहिता में कही भी उच्च न्यायालय द्वारा जब्ती के आदेश का प्रावधान नही है। इसलिए हमारी राय है कि धारा 99डी के तहत यह उच्च न्यायालय का कर्तव्य है कि वह जब्ती के आदेश को रद्द कर दे। यदि वह इस बात से सन्तुष्ट नही है कि जिन आधारों पर सरकार ने अपनी राय बनाईहै कि वे पुस्तकें मायने रखती है जिनका प्रकाशन किसी एक या अधिक धाराओदण्ड संहिता की धारा 124ए, 153ए या 295ए के तहत दण्डनीय होगा, उस राय को उचित ठहरा सकती है। यह उसका कर्तव्य नही है कि वह औरअधिक करे औरस्वयं यह पता लगाये कि पुस्तक में ऐसी कोई बात थी या नही।

तब क्या होगा जब सरकार ने अपनी राय का आधार नही बताया ? ऐसे में अगर उच्च न्यायालय ने आदेश बरकरार रखा, तो हो सकता है कि उसने ऐसा उन कारणो से किया होगा, जिनके बारे में सरकार ने बिल्कुल भी विचार नही किया होगा। यदि उच्च न्यायालय ने ऐसा किया होता तो वह वास्तव में स्वयं जब्ती का आदेश दे देता औरसरकार द्वारा दिये गये ऐसे आदेश को बरकरार नही रखता। जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है,

धारा 99डी के तहत उच्च न्यायालय के पास ऐसा करने की कोईशक्ति नही है। इसलिए हमें यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि ऐसे मामले में उच्च न्यायालय को धारा 99डी के तहत आदेश को रद्द कर देना चाहिए। क्योंकि तब वह इस बात से सन्तुष्ट नही हो सकता कि सरकार द्वारा दिये गये आधार आदेश को उचित ठहराते थे। आप उस चीज के बारे में सन्तुष्ट नही हो सकते जिसे आप नही जानते। यह वह दृष्टिकोण है जो (1) अरूण रंजन घोष बनाम पश्चिम बंगाल राज्य में लिया गया औरहम इससे पूरी तरह सहमत है। प्रस्तुत कुछ ऐसा ही मामला है। हमारा मानना है कि धारा 99डी के तहत यह उच्च न्यायालय का कर्तव्य था कि इस मामले में किये गये जब्ती के आदेश को रद्द करता।

हम तद्नुसार अपील की अनुमति देते है औरसरकार के 30 जुलाई 1953 के जब्ती आदेश को रद्द कर देते है। अपीलार्थी उस आदेश के तहत जब्त की गईसभी पुस्तकों, दस्तावेजों औरचीजों को वापस करने का हकदार होगा।

न्यायाधिपति दास गुप्ता-30 जुलाई 1953 की एक अधिसूचना द्वारा उत्तर प्रदेश सरकार धारा 99ए के तहत कार्य कर रही है, ने अप्रेल 1953 में अपीलार्थी हरनाम दास द्वारा प्रकाशित पुस्तकों "सिख मत खानदान भाग 1" और"भूमिका नजम सिख मत खानदान" को इस आधार पर सरकार को जब्त कर लिया कि इन पुस्तको में वे मामले शामिल थे,

जिसका प्रकाशन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 153ए और 295ए के तहत दण्डनीय था। उच्च न्यायालय ने पुस्तको की जांच में पाया कि वे स्पष्ट रूप से भारतीय दण्ड संहिता की धारा 153ए और 295ए की शरारत के अन्तर्गत आती है। तद्नुसार यह माना गया कि दोनो पुस्तको को जब्त करने का राज्य सरकार का आदेश बिल्कुल न्यायोचित औरउचित था औरइस दृष्टि से आवेदन को निरस्त कर दिया गया।

ऐसा प्रतीत होता है कि एक तर्क उठाया गया है कि जब्ती के आदेश को उस अधिसूचना के रूप में अलग रखा जाना चाहिए जिसके द्वारा सरकार ने घोषणा की थी।

(1) (1955) 59 सी.डबल्यू.एन. 495-

धारा 99ए के अन्तर्गत जब्ती के आदेश के अनुसार सरकार की राय के आधार नही बताये गये। उच्च न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया क्योकि उनकी राय थी कि धारा 99डी, दं.प्र.सं. के प्रावधानो के मद्देनजर उच्च न्यायालय को "इस सवाल के अलावा किसी भी अन्य बिन्दु पर विचार करने से रोक दिया गया था कि क्या वास्तव में दस्तावेज आरोपित अपराध की श्रेणी में आता है"।

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि सरकारी अधिसूचना में सरकार द्वारा बनाईगईराय का आधार नही बताया गया कि इन दस्तावेजों में ऐसे मामले

शामिल है जिनका प्रकाशन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 153 ए औरधारा 295 ए के तहत दण्डनीय था। हमारे सामने सवाल यह उठाया गया है कि क्या उच्च न्यायालय इस तर्क को निरस्त करने में सही था कि जब्ती के आदेश को इस आधार पर रद्‌द कर दिया जाना चाहिए कि सरकार की राय के आधार सरकारी अधिसूचना में नही बताये गये थे, जैसा कि धारा 99 ए द्‌वारा आवश्यक था। इस प्रश्न के संबंध में विद्‌वान न्यायाधीशों का जो दृष्टिकोण था, वह उसी उच्च न्यायालय द्‌वारा (1) बैजनाथ बनाम एम्परर के पिछले मामले में औरराजस्थान उच्च न्यायालय द्‌वारा (2) प्रेमी खेम राज बनाम मुख्य सचिव में दिये गये दृष्टिकोण के अनुरूप था। यही दृष्टिकोण बाद में (3) आंध प्रदेश उच्च न्यायालय ने एन. वीर ब्रह्नाम बनाम आंध्र प्रदेश राज्य में और(4) इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने बाबा खलील अहमद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य में बाद के निर्णय में लिया। ऐसा प्रतीत होता है कि (5) अरूण रंजन घोष बनाम पश्चिम बंगाल में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्‌वारा एक विपरीत दृष्टिकोण अपनाया गया है।

धारा 99 ए का महत्वपूर्ण भाग इन शब्दों में है;

> ''जहां कोईअखबार या किताब या कोईदस्तावेज, सरकार को ऐसा प्रतीत होता है कि उसमें कोईदेशद्रोही मामला है या कोईऐसा मामला है जो विभिन्न वर्गो के बीच शत्रुता या घृणा की भावनाओ को बढावा देता है या बढावा

देने का इरादा रखता है। भारत के नागरिकों या जो जानबूझकर औरदुर्भावनापूर्ण रूप से किसी ऐसे ऐसे वर्ग के धर्म या धार्मिक विश्वास का अपमान करके उनकी धार्मिक भावनाओ को अपमानित करने का इरादा रखते है।

(1) ए.आई.आर. (1925) इलाहाबाद 195.

(2) ए.आई.आर. (1951) राज. 113.

(3) ए.आई.आर. (1959) आंध्र प्रदेश 572.

(4) ए.आई.आर. (1960) इलाहाबाद 715.

(5) (1955) सी.डबल्यू.एन. 495.

अर्थात, कोईभी मामला जिसका प्रकाशन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 124ए या धारा 153ए या धारा 295ए के तहत दण्डनीय है, राज्य सरकार अपनी राय के आधार बताते हुए अधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा घोषित कर सकती है। ....ऐसी पुस्तक की प्रत्येक प्रति .... सरकार द्वारा जब्त कर ली जायेगी"।

इसलिए यह स्पष्ट है कि इससे पहले कि कोईभी सरकार इस धारा के प्रावधानो के तहत किसी पुस्तक को जब्त करने की घोषणा करे, उसे

पहले यह राय बनानी होगी कि पुस्तक में कोईऐसा मामला है जिसका प्रकाशन धारा 124ए या धारा 153ए या भारतीय दण्ड संहिता की धारा 295ए के तहत दण्डनीय है। एक बार जब वह ऐसी राय बना लेती है तो सरकार के पास पुस्तक को जब्त घोषित करने की शक्ति होती है। धारा के लिए आवश्यक है कि यह अधिकारिक राजपत्र में एक अधिसूचना द्वारा किया जाना चाहिए औरउस अधिसूचना में सरकार को उन आधारों को बताना आवश्यक है जिन पर उसने यह राय बनाईहै।

हालांकि विधायिका ने सरकार द्वारा दिये गये ऐसे आदेश को किसी भी हमले से प्रतिरक्षित नही किया। धारा 99बी में ऐसे साधन उपलब्ध कराये गये है जिनके द्वारा पीडित व्यक्ति आदेश के खिलाफ राहत प्राप्त कर सकता है। यदि वास्तव में सरकार अपनी राय में गलत थी औरपुस्तक में ऐसा कोईमामला नही था जिसका प्रकाशन धारा 124ए या धारा 153ए या भारतीय दण्ड संहिता की धारा 295ए के तहत दण्डनीय हो। धारा 99बी इस प्रकार चलती हैः-

> ''किसी भी व्यक्ति को किसी भी समाचार में रूचि हो-कागज, किताब या अन्य दस्तावेज, जिसके संबंध में धारा 99ए के तहत जब्ती का आदेश दिया गया है। ऐसे आदेश की तारीख से दो महीने के भीतर, इस आधार पर ऐसे आदेश को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय में आवेदन

कर सकता है कि समाचार पत्र या पुस्तक या अन्य दस्तावेज जिसके संबंध में आदेश किया था, इसमें कोईदेशद्रोही या अन्य मामला नही था। ऐसी प्रकृति का मामला जैसा कि धारा 99ए की उपधारा (1) में संदर्भित है"।

धारा 99डी में प्रावधान है कि यदि आवेदन की सुनवाईके बाद उच्च न्यायालय इस बात से सन्तुष्ट नही है कि विचाराधीन दस्तावेज के मुद्दे में कोईदेशद्रोही मामला या धारा 99ए में निर्दिष्ट कोईअन्य मामला शामिल नही है। यानी कोईभी मामला जिसका प्रकाशन धारा 124ए या धारा 153ए या भारतीय दण्ड संहिता की धारा 295ए के तहत दण्डनीय है, उच्च न्यायालय जब्ती के आदेश को रद्द कर देगा। प्रावधान का आवश्यक परिणाम यह भी है कि यदि उच्च न्यायालय इस बात से सन्तुष्ट है कि प्रश्नाधीन पुस्तक में वह विषय है जिसका प्रकाशन धारा 124ए या धारा 153ए या भारतीय दण्ड संहिता की धारा 295ए के तहत दण्डनीय है, उच्च न्यायालय जब्ती के आदेश को रद्द करने से इन्कार कर देगा।

ध्यान देने वाली बात यह है कि धारा 99बी ने जब्ती के आदेश से पीडित व्यक्ति को राहत प्रदान करने में उन आधारों को सीमित कर दिया है जिन पर राहत केवल एक औरएक के लिए लागू की जा सकती है, अर्थात समाचार पत्र या पुस्तक या अन्य दस्तावेज के मुद्दे संबंध में जो

आदेश दिया गया था, उसमें कोईदेशद्रोही मामला या ऐसी प्रकृति का कोईअन्य मामला शामिल नही है, जैसा कि धारा 99ए. की उपधारा (1) में संदर्भित है।

अपीलार्थी का तर्क है कि उच्च न्यायालय को यह पता लगाने के लिए अधिसूचना की भी जांच करनी चाहिए कि क्या सरकार ने धारा 99ए के अनुसार अपनी राय के आधार बताये है औरजब्ती के आदेश को रद्द कर देता है यदि उसे पता चलता है कि यह आवश्यकता पूरी हो गईहै तो एक अतिरिक्त आधार जोड़ना चाहता है जिस पर धारा 99बी के तहत आवेदन किया जा सकता है औरधारा 99डी के तहत उच्च न्यायालय द्वारा राहत दी जा सकती है। प्रश्न यह है कि क्या ऐसा किया जा सकता है ? यह पहचानना अच्छा है कि जिस तरह अपील का अधिकार कानून की एक सृष्टी है, उसी तरह किसी आदेश को रद्द करने के लिए आवेदन करने का अधिकार जो वास्तव में अपील की प्रकृति में है-समान रूप से कानून की एक सृष्टी है औरजब विधायिका ऐसा अधिकार बनाती है, एक कानून के द्वारा वह अपनी इच्छानुसार अधिकार को असीमित बना सकती है या इसे अपनी इच्छानुसार किसी भी तरीके से सीमित कर सकती है। यह स्थापित कानून है कि कोईभी न्यायालय अपील के लिए आधारों को बढा या चढा नही सकता, जैसा कि अपील करने वाले कानून में निर्धारित है।

स्थिति बिल्कुल वैसी ही है जब कानून आवेदन के माध्यम से राहत

पाने का अधिकार बनाता है और कोई भी अदालत उन आधारों को नही जोड़ सकती है जिन पर राहत मांगी जा सकती है। यदि राहत प्राप्त करने का अधिकार बनाने वाला कानून एक या अधिक निर्दिष्ट आधारों तक सीमित है। इस संबंध में आदेश 47 नियम 1 द्वारा दिये गये समीक्षा के लिए आवेदन करने के अधिकार को याद रखना दिलचस्प है। सिविल प्रक्रिया संहिता का नियम 1 निर्दिष्ट करने के बाद कुछ आधार जिन पर समीक्षा के लिए आवेदन किया जा सकता है, विधायिका ने "किसी अन्य पर्याप्त कारण के लिए" शब्दो में एक औरआधार जोड़ा। इन शब्दो की उचित व्याख्या "किसी अन्य पर्याप्त कारण के लिए" ने अदालतो को चिंतित कर दिया है और 1922 में प्रिवी काउंसिल ने कईमामलो की समीक्षा के बाद यह नियम बनाया कि "किसी अन्य पर्याप्त कारण के लिए" का अर्थ एक कारण है, कम से कम तुरन्त पहले निर्दिष्ट आधारों के अनुरूप आधार पर पर्याप्त। यदि सही स्थिति यह होती कि न्यायालय जब भी उचित समझे, समीक्षा के लिए आधार जोड़ सकता है, तो "किसी अन्य पर्याप्त कारण के लिए" की व्याख्या के संबंध में सभी चर्चा निरर्थक औरअनावश्यक होती।

वास्तव में कानून में स्थिति यह है कि अदालतें उन आधारों को नही जोड़ सकती है जिन तक विधायिका ने राहत के अधिकार को सीमित कर दिया है, यह इतना स्पष्ट औरनिर्विवाद है कि अपीलार्थी के विद्वान

अधिवक्ता को यह सुझाव देना पसन्द नही आया कि कोईआधार जोड़ा जा सकता है। इस कठिनाईको दूर करने के लिए अदालते धारा 99बी औरधारा 99डी में निर्दिष्ट राहत के आधारों को नही जोड़ सकती है। एक अनोखा तर्क दिया गया है कि उच्च न्यायालय धारा 99बी औरधारा 99डी में उल्लेखित आधार पर ही उचित राहत दे सकता है। यह जरूरी है कि सरकार के आदेश में उसकी राय का आधार बताया जाये। तर्क के चरणो को शीघ्र ही इस प्रकार बताया जा सकता हैः-सरकार ने एक राय बना ली है। उच्च न्यायालय को यह देखना होगा कि राय सही है, ऐसा करने के लिए उच्च न्यायालय को यह अवश्य जानना चाहिए कि उसकी राय पर पहुंचने में सरकार का क्या महत्व है। इसलिए सरकार की राय के आधार के बिना उच्च न्यायालय धारा 99डी के अर्थ में सन्तुष्ट नही हो सकता है कि समाचार पत्र के अंक में वह मामला शामिल था जिसकी शिकायत की गईथी।

इस न्यायशास्त्रीय प्रक्रिया की भ्रांति इस आधार की अस्पष्टता में है कि यह निर्धारित करने के लिए कि सरकार की राय सही है या नही, उच्च न्यायालय को यह जानना होगा कि सरकार के पास क्या प्रमाण भार है। जब आवेदन पर उच्च न्यायालय द्वारा सुनवाईकी जाती है औरउसे इस निष्कर्ष पर पहुंचना होता है कि क्या वह सन्तुष्ट है या नही कि समाचार पत्र या पुस्तक या अन्य दस्तावेज के मुद्दे में धारा 99ए में उल्लेखित

मामला शामिल है। किसी निष्कर्ष पर पहुंचने का एक मात्र तरीका मुझे अखबार या किताब या अन्य दस्तावेज पढना प्रतीत होता है। अधिवक्ता के तर्क सहायक हो सकते है; यदि सरकार ने अपनी राय पर पहुंचने के लिए अपने आधार बताये है, तो इससे भी मदद मिलेगी; लेकिन यह निर्णय लेने की अंतिम जिम्मेदारी कि समाचार पत्र के अंक में धारा 99ए में उल्लेखित मामलों से सन्तुष्ट होना चाहिए या नही। केवल उच्च न्यायालय द्वारा विचाराधीन दस्तावेज को पढकर ही पूरी की जा सकती है।

धारा 99बी औरधारा 99डी में यह सुझाव दिया गया है कि जब "कोईभी देशद्रोही या ऐसी प्रकृति का अन्य मामला, जैसा कि धारा 99ए की उपधारा (1) में संदर्भित है" शब्दो का उपयोग किया गया है, उनका मतलब केवल वे मामले है जिन पर सरकार ने जब्ती का आदेश आधारित किया है; इसलिए यह आग्रह किया जाता है कि, जब तक सरकार अपनी राय का आधार नही बताती, तब तक न्यायालय के लिए धारा 99डी के तहत प्रश्न का निर्णय करना असंभव होगा।

मैं स्वीकार करता हॅू कि मुझे नही लगता कि ऐसे मामले की कल्पना करना उचित रूप से संभव है, जहां धारा 99ए के तहत एक आदेश में धारा 99ए में निर्दिष्ट विशेष मामले का उल्लेख नही होगा। धारा 99ए (1) में निर्दिष्ट कईमामलों में से किसी विशेष मामलें का उल्लेख, जो उसकी राय में दस्तावेज में शामिल है, में राय बनाने के कारणों का विवरण

शामिल नही है। मान लीजिए कि कोईसरकार कहती है कि उसकी राय में दस्तावेज में देशद्रोही बातें है। केवल इस कारण से कि राय बनाने का कारण भी नही बताया गया है, यह इस मुद्दे पर एक सम्पूर्ण बयान नही रह जाता है। इस राय का गठन कि धारा में संदर्भित एक या अधिकि मामले एक दस्तावेज में निहित है औरयह कथन कि ऐसी राय बनाईगईहै, राय बनाने के कारणों के बयान से काफी अलग है। मुझे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि जहां वर्तमान मामलें में सरकारी आदेश में धारा 99ए में संदर्भित कईमामलों में से विशेष मामलें या मामलों का विवरण शामिल है, अर्थात कोईभी देशद्रोही मामला या कोईभी मामला जो भारत के नागरिकों के विभिन्न वर्गो के बीच शत्रुता या घृणा की भावनाओ को बढावा देता है या बढावा देने का इरादा रखता है या जो जानबूझकर औरदुर्भावनापूर्ण रूप से अपमान करके ऐसे किसी भी वर्ग की धार्मिक भावनाओ को अपमानित करने का इरादा रखता है, धर्म या उस वर्ग की धार्मिक मान्यताऐं, अर्थात कोईभी बात जिसका प्रकाशन भारतीय दण्ड संहिता की धारा 124ए या धारा 153ए या धारा 295ए के तहत दण्डनीय है" जो उसकी राय में दस्तावेज में शामिल है, कोईकठिनाईउत्पन्न नही हो सकती है, इस तथ्य से कि न्यायालय को ऐसी राय बनाने के लिए सरकार से कोईआधार नही मिला है।

लेकिन, अपीलार्थी पूछता है, फिर विधायिका के लिए धारा 99ए में

इसकी आवश्यकता क्यो आवश्यक थी कि सरकार की जब्ती के आदेश को अधिसूचित करते समय अपनी राय का आधार बताना चाहिए ? वास्तविक कारण, यह आग्रह किया गया है, उच्च न्यायालय को जब्ती के आदेश को रद्द करने में सक्षम बनाना था। यदि वह उन आधारों की औचित्य से सन्तुष्ट नही था, औरअनिवार्य रूप से तब भी जब कोईआधार नही बताया गया था। यदि यह सही था, तो विधायिका से यह अपेक्षा करना उचित था कि वह इसमें आवश्यक प्रावधान करेगी। धारा 99 बी के एक आदेश को इस आधार पर चुनौती दी जा सकती है कि राय के आधार नही बताये गये थे औरधारा 99 डी में परिणामी प्रावधान नही थे। मुझे यह समझने के प्रयास में कि धारा 99 ए औरधारा 99 डी क्यों है-शब्दो को, जो वहां नही है, पढने का कोईऔचित्य नही दिखता। धारा 99 ए में राय के आधार के विवरण के लिए ऐसी आवश्यकता शामिल है। इसमें कोईसन्देह नही है कि यह एक बहुत ही सराहनीय प्रावधान है कि सरकार को अपनी राय के आधारों को दर्ज करना चाहिए। इस तरह के प्रावधान से सरकार द्वारा जब्ती का मनमाना आदेश देने का जोखिम कम हो जाता है। इसलिए विधायिका के लिए यह विधायी नीति का प्रश्न था कि सरकार को अपनी राय बतानी चाहिए। यह कहना कि धारा 99 ए में ऐसी आवश्यकता को शामिल करने का कोईकारण नही हो सकता था। जब तक विधायिका का इरादा उच्च न्यायालय को हस्तक्षेप करने का नही है, यदि राय के आधार नही बताये गये है, मेरी राय में पूरी तरह से अनुचित है।

मुझे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि धारा 99डी द्वारा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों पर लगाया गया कर्तव्य यह देखना नही है कि किसी विशेष मामलें में सरकार द्वारा अपनी राय बनाने के लिए 64 द्वारा बताये गये आधार सही है या नही, बल्कि यह देखना है कि बनाईगईराय सही थी या नही। इस कर्तव्य को निभाने का एक मात्र तरीका उस दस्तावेज की जांच करना है जिसमें सरकार की राय में शिकायत की गईबात शामिल है।

तर्क यह है कि उच्च न्यायालय धारा 99डी के तहत यह कर्तव्य निभाने की स्थिति में नही है। संतोषजनक ढंग से सरकार द्वारा अपनी राय के आधार के बयान के अभाव में मुझे पूरी तरह से अनुचित लगता है।

इसी मामलें में, इलाहाबाद उच्च न्यायालय के विद्वान न्यायाधीशों को उनके समक्ष प्रश्न पर किसी निष्कर्ष पर पहुंचने में कोईकठिनाईमहसूस नही हुई, भले ही सरकार ने अपनी राय का आधार नही बताया था। मैं उन कठिनाईयों की कल्पना करने का कोईऔचित्य नही समझ पता जहाँ कोईकठिनाईनही है।

इसलिए मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि उच्च न्यायालय इस तर्क को निरस्त करने में सही था कि जब्ती के आदेश को इस आधार पर रद्द कर दिया जाना चाहिए कि अधिसूचना राज्य सरकार की राय बनाने के लिए आधार नही बताती है।

इसलिए, अपील निरस्त की जानी चाहिए-न्यायालय द्वारा-बहुमत की राय को ध्यान में रखते हुए, इस अपील को स्वीकार किया जायेगा औरउच्च न्यायालय के आदेश को रद्द कर दिया जायेगा-अपीलार्थी अब रद्द किये गये आदेश के तहत उससे जब्त की गईसभी पुस्तकों, दस्तावेजों औरअन्य चीजों को वापस करने का हकदार होगा। वह उन खर्चों औरलागतों की वापसी का भी हकदार होगा जो उसे उच्च न्यायालय के आदेश के तहत भुगतान करने पड़े थे।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक **सिया रघुनाथ दान** (न्यायिक अधिकारी) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।